1

R.N.I. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2024-26

मूल्य–7 रुपये, वर्ष–24, अङ्क–6 जून 2024

मङ्गलायतन

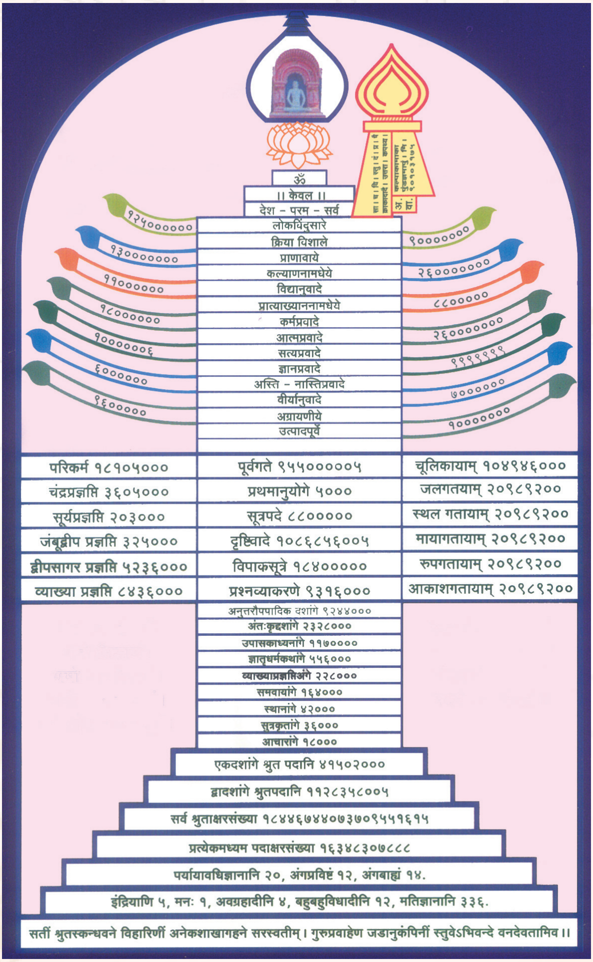

(श्री श्रुत पंचमी महोत्सव, ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी, दिनांक 11 जून 2024)

तीर्थधाम चिदायतन, हस्तिनापुर में

श्री 1008 शान्तिनाथ जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महामहोत्सव

(रविवार, 1 दिसम्बर से शुक्रवार, 6 दिसम्बर 2024)

मङ्गल आमन्त्रण

आदरणीय सत्धर्म प्रेमी साधर्मीजन,

सादर जयजिनेन्द्र !

समस्त जिनधर्मभक्तों को जानकर हर्ष होगा कि परमोपकारी वीतरागी देव-शास्त्र-गुरु की अनुकम्पा से, पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के पुण्य प्रभावनायोग में, अखिल विश्व की आश्चर्यकारी, परमपवित्र तपोभूमि-हस्तिनापुर की पुण्यधरा पर, **तीर्थधाम चिदायतन** का अवतरण हो रहा है।

हस्तिनापुर वह गौरवशाली ऐतिहासिक एवं पौराणिकनगरी है, जहाँ पर तीन-तीन तीर्थंकरों (भगवान शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ एवं अरनाथ) के चार-चार कल्याणक हुए हैं। साथ ही यह पौराणिक स्थल भगवान मल्लिनाथ के समवसरण, भगवान आदिनाथ के प्रथम आहारदान तथा विष्णुकुमार के द्वारा अकम्पनाचार्य आदि सात सौ मुनिराज पर हुए उपसर्ग निवारण का साक्षी रहा है। यह नगरी, जैन महाभारत के महानायक पाण्डवों एवं कौरवों की प्रसिद्ध राजधानी रही है। प्रतिवर्ष धर्मनगरी हस्तिनापुर में विश्व के अलग-अलग कोनों से लाखों की संख्या में दर्शनार्थी पधारते हैं।

इस संकुल के सम्बन्ध में देश के ख्यातिप्राप्त विद्वानों, श्रेष्ठियों एवं साधर्मियों ने अपनी हार्दिक अनुमोदना प्रदान कर हमारा उत्साहवर्धन किया है।

इस महान धार्मिक प्रकल्प **तीर्थधाम चिदायतन** में भगवान श्री शान्तिनाथ चिदेश जिनालय; श्री गन्धकुटी चौबीसी चिदेश जिनालय का भव्य **पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महामहोत्सव रविवार, 1 दिसम्बर से शुक्रवार, 6 दिसम्बर 2024** तक होना निश्चित हुआ है। आप सब इस महामहोत्सव में सादर आमन्त्रित हैं।

आइये, तीर्थधाम चिदायतन संकुल निर्माण की अनुमोदना एवं हस्तिनापुर तीर्थक्षेत्र के दर्शन कर अपना जीवन धन्य करें।

——: सम्पर्कसूत्र :——

पण्डित सुधीर शास्त्री, मोबा. 97566 33800

श्री नवनीत जैन, नोएडा, मोबा. 8171012049

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट (रजि.), अलीगढ़ (उ.प्र.) का

मासिक मुखपत्र

वर्ष-24, अङ्क-6 (वी.नि.सं. 2550; वि.सं. 2080) जून 2024

आचार्य श्री धरसेन जो न ग्रन्थ लिखाते

आचार्यश्री धरसेन जो, न ग्रन्थ लिखाते।
हम जैसे बुद्धिहीन, तत्त्व कैसे लहाते॥

अपने अलौकिक ज्ञान से सब भेद जानकर।
बुलवाये मुनिराज की महिमानगर खबर॥
गर वे नहिं मुनिराज युगल ऐसे बुलाते,...... 1

आने से पहले स्वप्न में ही योग्य जानकर।
दो मन्त्र सिद्धि द्वारा फिर, परखा प्रधान कर॥
उत्तीर्ण होकर योग्यता, गर वे न दिखाते,...... 2

पश्चात् पढ़ाया उन्हें, निज शिष्य मानकर।
उनने भी ग्रन्थ लिखा, गुरु उपकार मानकर॥
करुणा निधान मुनि नहिं, गर ग्रन्थ रचाते,...... 3

श्री पुष्पदन्त सूरि प्रथम खण्ड बनाया।
अभिप्राय जानने को, भूतबली पै पढ़ाया॥
यदि वे नहिं उस ग्रन्थ का, प्रारम्भ कराते,...... 4

उनने प्रसन्न होय, शेष ग्रन्थ रचाया।
श्री ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी को, पूर्ण कराया॥
गर वे नहिं इस ग्रंथ को सम्पूर्ण कराते,...... 5

ग्रन्थाधिराज की हुई थी आज ही पूजा।
इस काल में इससे बड़ा न काम है दूजा॥
करुणा सागर गुरु अगर ऐसा न कराते...... 6

साभार : मंगल भक्ति सुमन

संस्थापक सम्पादक
स्व. पण्डित कैलाशचन्द्र जैन, अलीगढ़
स्व. श्री पवन जैन, अलीगढ़

सम्पादक
डॉ. जयन्तीलाल जैन, मङ्गलायतन वि०वि०

सह सम्पादक
डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन

सम्पादक मण्डल
बाल ब्रह्मचारी हेमन्तभाई गाँधी, सोनगढ़
डॉ. राकेश जैन शास्त्री, नागपुर
श्रीमती बीना जैन, देहरादून

सम्पादकीय सलाहकार
श्री चिरंजीलाल जैन, भावनगर
श्री प्रवीणचन्द्र पी. वोरा, देवलाली
श्री वसन्तभाई एम. दोशी, मुम्बई
श्री श्रेयस् पी. राजा, नैरोबी
श्री विजेन वी. शाह, लन्दन

मार्गदर्शन
डॉ. किरीटभाई गोसलिया, अमेरिका
पण्डित अशोक लुहाड़िया, मङ्गलायतन

क्या - कहाँ

प्रथमानुयोग	धर्मी जीव की भावना	5
द्रव्यानुयोग	समयसार नाटक	10
	स्वानुभूतिदर्शन :	16
प्रथमानुयोग	हस्तिनापुर का अतिशयकारी इतिहास	19
करणानुयोग	भरतक्षेत्र के खण्ड	22
प्रथमानुयोग	कवि परिचय	24
करणानुयोग	श्रुत परम्परा एवं श्रुतज्ञान	26
द्रव्यानुयोग	बालवाटिका	28
	जिस प्रकार–उसी प्रकार	29
	समाचार–दर्शन	30

शुल्क :

एक प्रति	:	**07.00 ₹**
आजीवन (15 वर्ष)	:	**1000.00 ₹**

प्रथमानुयोग

आगामी तीर्थधाम चिदायतन के पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के पावन प्रसंग में पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी द्वारा पंचकल्याणक पर किए गए प्रवचनों का धारावाहिक प्रकाशन किया जा रहा है।

जन्मकल्याणक प्रवचन

धर्मी जीव की भावना

यह तो भगवान की प्रतिष्ठा का महोत्सव चल रहा है। भगवान ने जैसा कहा, वैसी आत्मा की महिमा और पहिचान ही सच्चा महोत्सव है।

वसुबिन्दु—प्रतिष्ठापाठ में जिनबिम्ब की प्रतिष्ठा करानेवाले श्रावक का वर्णन आता है। वह श्रावक, श्रीगुरु के समीप जाकर आज्ञा माँगता है कि हे स्वामी! मैं इस धनादि लक्ष्मी को कुलटा स्त्री के समान व अनित्य जानता हूँ। मैं इस लक्ष्मी का अनुराग घटाकर इसका सदुपयोग करूँ—ऐसा कोई कार्य बताओ। मेरी भावना श्री अरिहन्त भगवान का पञ्च कल्याणक कराने की है।

तब श्रीगुरु कहते हैं कि हे भव्य! धन्य है, तू अपने कुल में सूर्य समान है। ऐसा कहकर वे जिनबिम्ब प्रतिष्ठा और पञ्च कल्याणक महोत्सव की आज्ञा प्रदान करते हैं।

यह महोत्सव अनन्त भवों का नाशक है। यहाँ बाह्यक्रिया अथवा मात्र शुभराग की बात नहीं है, परन्तु अपने ज्ञाता—दृष्टा स्वभाव के भानपूर्वक उसमें लीन होकर तृष्णा घटाने से अनन्त अवतार का नाश हो जाता है। परमार्थ से तो आत्मस्वभाव की जो अनन्त ज्ञानमय सम्पत्ति है, उसे प्रगट करके राग का अभाव करना ही महोत्सव है। महोत्सव करानेवाला अपने राग को घटाने के लिए अपनी सम्पत्ति का व्यय करता है। वस्तुतः आत्मा सम्पत्ति का व्यय नहीं कर सकता, परन्तु राग घटाने के उद्देश्य के लिए व्यवहार से सम्पत्ति के व्यय की बात कही गयी है।

आचार्यदेव प्रतिष्ठा करानेवाले गृहस्थ से कहते हैं कि हे भाग्यवान! तेरा अवतार सफल है कि तेरे घर ऐसा महान अवसर आया है। स्वर्ग—मोक्ष के कारणरूप तेरा सफल अवतार है, तेरे महाभाग्य है। मात्र लक्ष्मी खर्च करके हो—हल्ला कर दे अथवा मान—प्रतिष्ठा के लिए धन खर्च करे — ऐसे जीव की बात यहाँ नहीं है, परन्तु जिसे अन्तर में रागरहित आत्मस्वभाव का बहुमान है और जड़ लक्ष्मी मेरी वस्तु नहीं है — ऐसा जानकर जिसे उसका अभिमान मिट गया है, वह जीव लक्ष्मी के प्रति राग घटाने हेतु तत्पर हुआ है, उसकी बात है। अन्तर में रागरहित ज्ञायकस्वभाव का भान हो तो कल्याण है। जड़ की क्रिया का स्वामी न हो तथा शुभराग को धर्म न माने; इस प्रकार जहाँ—जहाँ जो—जो योग्य हो, वहाँ वह—वह समझे और रागरहित स्वभाव की दृष्टि रखकर राग घटाने के स्थान पर राग घटाये।

देखो, अन्तर में आत्मा के भान बिना राग घटाने की परमार्थ मार्ग में कोई कीमत नहीं है। राग घटाने का निषेध नहीं है, परन्तु आत्मा का भान होना चाहिए कि आत्मा, पैसे अथवा मन्दिरादि जड़ की क्रिया को नहीं कर सकता, और जो शुभराग होता है, उससे भी मुझे लाभ नहीं है। स्वभाव के भानसहित जितना राग मिटा, उतना लाभ है। इस प्रकार पहले आत्मा की सच्ची समझ का मूल आधार रखकर फिर सब बात है। कोई जीव सच्ची समझ के बिना राग को मन्द करे तो उसको ज्ञानी नहीं कहते, परन्तु उससे आत्मा का अपूर्व कल्याण नहीं होता और अनन्त जन्म-मरण का अभाव नहीं होता।

आत्मा स्वयं देह—मन—वाणी नहीं है तथा देह—मन—वाणी की क्रिया का कर्ता भी आत्मा नहीं है। कोई कहे कि 'निश्चय से तो ऐसा है कि आत्मा, पर का कुछ नहीं कर सकता परन्तु व्यवहार से तो आत्मा पर का कर्ता है न?' तो यह बात भी मिथ्या है। आत्मा निश्चय से अथवा व्यवहार से किसी भी प्रकार से पर का कर्ता तो है ही नहीं। 'निश्चय से नहीं करता और व्यवहार से कर्ता है'—ऐसा दो प्रकार का कथन है परन्तु वस्तु का स्वरूप ऐसा दो प्रकार का नहीं है। निश्चय की बात को लक्ष्य में रखकर

व्यवहार का अर्थ समझना चाहिए। आत्मा शरीरादि की कोई क्रिया नहीं कर सकता—ऐसा ही वस्तु स्वरूप है—यही निश्चय है और 'आत्मा शरीरादि का कर्ता है'—ऐसा कथन व्यवहारनय से शास्त्र में होता है, वह मात्र निमित्त का कथन है, वस्तुस्वरूप नहीं। शरीरादि की क्रिया होने के काल में कैसा निमित्त था, उसका ज्ञान कराने के लिए यह व्यवहार का कथन है।

भगवान के गंधोदक का पानी लेकर मस्तक पर चढ़ावे और कहे कि हे भगवान! आप संसार से तिरे हो और मुझे भी तारो—तो क्या भगवान किसी को तारते होंगे? अथवा गंधोदक का पानी किसी को तारता होगा? यह तो मात्र भगवान के प्रति विनय की भाषा है। आत्मा के अन्तर का पानी (पुरुषार्थ) उछले बिना मुक्ति नहीं हो सकती। बाहर की क्रिया से आत्मा के अन्तर पुरुषार्थ की पहिचान नहीं हो सकती। जैसे, जौहरी ही हीरे के पानी का माप कर सकता है, परन्तु अनपढ़ किसान उसे नहीं पहिचान सकता; उसी प्रकार धर्मी जीव के अन्तर के पुरुषार्थ की पहिचान आहारादि की बाह्य क्रिया से नहीं हो सकती। अमुक प्रकार का आहार करे और अमुक प्रकार का त्याग ले—ऐसी बाहर की क्रिया से धर्मी जीव के धर्म का माप नहीं हो सकता, किन्तु अन्तर में आत्मस्वभाव की श्रद्धा और एकाग्रता करके कितना राग छूटा, इससे धर्मी का माप होता है।

अज्ञानी कहता है कि 'तुम मानते हो कि आत्मा में अनन्त शक्ति है और आत्मा स्वतन्त्र है तो छह महीने के उपवास कर दो न?' परन्तु ज्ञानी कहते हैं कि भाई! आत्मा की शक्ति का माप बाहर की क्रिया से नहीं है; कौन आहार ले और कौन आहार छोड़े? चैतन्यमूर्ति अरूपी आत्मा है, वह जड़ आहार के ग्रहण—त्याग की क्रिया नहीं कर सकता।

धर्म अर्थात् क्या? और धर्मी किसे कहना? लोग कहते हैं कि हमें धर्म करना है, तो धर्म कहाँ से होगा? यह बात चलती है। धर्म, शरीर में से नहीं होता, वाणी में से नहीं होता तथा धनादिक से भी धर्म नहीं होता क्योंकि ये सब तो आत्मा से भिन्न अचेतन है, इनमें आत्मा का धर्म विद्यमान नहीं है

तथा हिंसा, चोरी आदि पापभाव अथवा दया, पूजादि पुण्यभाव से भी धर्म नहीं होता, क्योंकि ये विकारीभाव हैं। धर्म करनेवाला आत्मा है और धर्म, आत्मा की दशा में ही होता है। वह धर्म कहीं बाहर से नहीं आता, बल्कि आत्मा के आश्रय से ही प्रगट होता है।

आत्मा की शुद्धदशा ही धर्म है। उस धर्म को करनेवाला आत्मा स्वयं ही है। धर्म करनेवाले आत्मा से ही धर्म होता है, किन्तु पैसे से, शरीर से, प्रतिमा से, अथवा देव—शास्त्र—गुरु से धर्म नहीं होता तथा उस तरफ के शुभराग से भी धर्म नहीं होता। धर्म, आत्मा की निर्मल वीतरागी शुद्धपर्याय है। वह पर्याय, पर्यायी आत्मा में से प्रगट होती है। आत्मा त्रिकाल ज्ञानादि निर्मल गुणों की खान है। श्रवण—मनन द्वारा उसकी पहिचान करने पर आत्मा में से जो निर्मल अंश प्रगट होता है, वह अंशी का अंश, धर्म है। भगवान आत्मा चैतन्यमूर्ति अनादि—अनन्त एकरूप है, वह अंशी है और उसके आश्रय से जो निर्मल अंश प्रगट होता है, वह अंश है। उस एक अंश में सम्पूर्ण आत्मा आ नहीं जाता।

यह जगत अपने आत्मा का स्वरूप समझे बिना बाहर की क्रिया में हो—हल्ला करता है, उसमें धर्म नहीं है। बाह्य जड़ की क्रिया से तो आत्मा को पुण्य—पाप भी नहीं होता है। यदि राग और लोभादि कषाय को मन्द करे तो पुण्य होता है और तीव्र कषाय होवे तो पाप होता है। बाहर की क्रिया तो आत्मा करता ही नहीं, वह तो जड़ के कारण स्वयं—स्वतः होती है। आत्मा से जड़ की क्रिया तो भिन्न है ही, राग—द्वेष की विकारी क्रिया भी भिन्न है। त्रिकाली शुद्धात्मा इन दोनों से भिन्न है। उस आत्मा की पहिचान से प्रगट होने वाला रागरहित शुद्ध अंश, धर्म है। धर्म की यह क्रिया आत्मा के आश्रय से ही होती है।

आत्मा की महिमा के परिज्ञान बिना, सच्चे देव—शास्त्र—गुरु की महिमा करने से भी मुक्ति नहीं होती। आत्मा की महिमा को विस्मृत करके पर की महिमा में अटकनेवाले को धर्म नहीं होता।

भगवान श्री कुन्दकुन्दाचार्यदेव छठवें—सातवें गुणस्थान की आत्मा की चारित्रदशा में झूल रहे हैं। वे क्षण में विकल्प तोड़कर आत्मा के अनुभव में स्थिर हो जाते हैं और सिद्ध भगवान सदृश अतीन्द्रिय आनन्द को भोगते हैं। दूसरे क्षण पुनः छठवें गुणस्थान में आने पर शुभविकल्प उत्पन्न होता है। उनको ऐसी दशा में 'जगत के जीव धर्म प्राप्त करें'—ऐसा शुभविकल्प उत्पन्न हुआ, और जगत के भाग्य से इन समयसार, प्रवचनसारादि ग्रन्थों की रचना हो गयी। उन ग्रन्थों में वर्णित आत्मा का क्या स्वरूप है—यह बात यहाँ चलती है।

आत्मा ज्ञायकमूर्ति है। जो शुभाशुभ वृत्तियाँ उत्पन्न होती हैं, वह अशुद्धता है, वह आत्मा का स्वरूप नहीं है। आत्मा की अवस्था में उत्पन्न शुभाशुभ वृत्तियाँ, परद्रव्य के अनुसरण से प्रगट होती हैं, आत्मस्वभाव का अनुसरण करने पर अशुद्धता नहीं होती। अशुद्धता का कारण परद्रव्यानुसार होती परिणति ही है और शुद्धता का कारण स्वद्रव्यानुसार होती परिणति ही है। दया, दान, पूजा, भक्ति, त्याग इत्यादि जितने व्यवहारधर्म—क्रिया के परिणाम हैं, वे समस्त ही परद्रव्यानुसारी अशुद्धभाव है, उनके द्वारा धर्म नहीं होता। इसलिए अन्तरदृष्टि द्वारा आत्मस्वरूप के निरीक्षण (अनुभव) को भगवान, सम्यग्दर्शनरूपी धर्म कहते हैं। वह सम्यग्दर्शन, वीतरागचारित्र का मूल कारण है और वीतरागचारित्र, मोक्ष का कारण है।

परद्रव्य के लक्ष्य से अशुद्धोपयोग होता है और उस अशुद्ध उपयोग के फल में भी परद्रव्य का ही संयोग होता है, उसके द्वारा स्वभाव की एकता नहीं होती। शुद्ध उपयोग में परद्रव्य का लक्ष्य नहीं होता और उस शुद्ध उपयोग से परद्रव्य का संयोग भी नहीं होता, क्योंकि वह तो आत्मा का स्वभाव है। जिसमें से अनन्त सिद्ध पर्यायें प्रगट हों — ऐसा चैतन्य भण्डार मैं हूँ। मेरी चैतन्यखान में से शुभ—अशुभभाव प्रगट नहीं होते — ऐसे भानपूर्वक धर्मी जीव, परद्रव्यों के प्रति मध्यस्थ होकर शुद्धोपयोग का अभ्यास करता है।

क्रमशः

द्रव्यानुयोग

श्री समयसार नाटक पर पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के धारावाही प्रवचन

कर्त्ता कर्म क्रिया द्वार प्रवचन

ज्ञान का कर्त्ता जीव ही है, अन्य नहीं है –

ग्यान सरूपी आतमा, करै ग्यान नहि और।
दरब करम चेतन करै यह विवहारी दौर ॥18॥

अर्थ:– ज्ञानरूप आत्मा ही ज्ञान का कर्त्ता है दूसरा नहीं है। द्रव्यकर्म को जीव करता है यह व्यवहार–वचन है ॥18॥

काव्य – 18 पर प्रवचन

ज्ञानस्वरूपी आत्मा ज्ञान ही करता है, अन्य कुछ नहीं करता। द्रव्यकर्म का कर्त्ता जीव है– ऐसा कहलाता है, वह तो व्यवहार वचन है।

तो प्रश्न होता है कि श्रावक छह आवश्यक कार्य तो करे या नहीं करे ? 1. देवपूजा 2. गुरु उपासना 3. स्वाध्याय 4. संयम 5. तप और 6. दान– ये छह तो श्रावक के नित्य कर्तव्य हैं– ऐसा शास्त्र में भी कहा है ?

समाधान:– भाई ! यह तो श्रावक की भूमिका में वैसे परिणाम आते हैं, उनका शास्त्र में ज्ञान कराया है। 'श्रावक को छह आवश्यक निरंतर करना' अर्थात् श्रावक को स्वयं को वैसे परिणाम आते हैं, उन्हें जानना ऐसा भाव है। शास्त्र के भाव को समझना बहुत कठिन है। नियम से करने योग्य तो 'मैं शुद्ध चैतन्य द्रव्य हूँ'– ऐसी श्रद्धा, ज्ञान और स्थिरता ही कर्तव्य है।

निहालभाई से (सोगानीजी से) किसी ने प्रश्न पूछा होगा कि स्थिरता क्यों नहीं होती ? तो उन्होंने कहा– स्थिर– ऐसी वस्तु को नहीं पकड़ा, इसलिए स्थिरता नहीं होती। अस्थिररूप राग परिणाम और एक समय की पर्याय को पकड़ा है, वह तो अस्थिर है, इसलिए अस्थिर ही रहेगा। परिणाम को पकड़नेवाला स्थिर नहीं हो सकता। नित्यानन्द प्रभु आत्मा स्थिर है, उसको पकड़ने पर परिणाम वहाँ स्थिर हो जाता है।

यह परिणाम का कर्त्ता आत्मा है –ऐसे भेद से कथन होता है, इसलिए कहा न! ज्ञानस्वरूपी आत्मा ज्ञान को ही करता है, अन्य कुछ नहीं करता। जीव द्रव्यकर्मों को करता है– यह तो मूढ़ जीवों का व्यवहार वचन है। 'सज्जायमाला' में सब ऐसे ही कथन है कि आत्मा कर्म को करता है, कर्म को बाँधता है और कर्म को भोगता है। अनाथी मुनि का एक दृष्टान्त आता है–

मैं रे अनाथी निर्ग्रन्थ श्रेणिक राय!

मैं छोड़्यो सकल यह संग रे श्रेणिक राय! मैं अनाथी निर्ग्रन्थ॥

राजा श्रेणिक हाथी पर बैठकर घूमने जा रहे थे कि रास्ते में बबूल के वृक्ष के नीचे एक मुनि को बैठे देखा। हाथी से नीचे उतरकर वंदन करके राजा कहता है महाराज! आप तो राज्य में रहने योग्य हो और ऐसी अनाथ दशा में किसलिए? मेरे साथ राज्य में चलो। तब मुनिराज ने कहा राजन्! मैं अनाथ था, इसलिए यहाँ आत्मा की शरण लेने आया हूँ, अनाथ तो अभी तुम हो। साहेब! आपने मुझे पहचाना नहीं, मेरे तो बड़ा राज्य है, रानियाँ हैं, धन–वैभव है; मैं अनाथ नहीं हूँ। मुनिराज बोले तुम राजा हो– यह पहिचानकर ही कहता हूँ कि तुम अनाथ हो श्रेणिक! श्रेणिक बोले –मैं अनाथ की व्याख्या समझा नहीं, साहब! अरे! चैतन्य भगवान शरण है, तू उसकी शरण में नहीं गया और रागादिक की शरण में पड़ा है; इसलिए तू अनाथ है। तेरी रक्षा करने वाला कोई नहीं है। तू भिखारी है। यह धूलरूप राज्य अथवा धन–वैभव कोई शरणरूप नहीं होनेवाले हैं; इसलिए तुझे पहचानकर ही अनाथ कहता हूँ।

यहाँ कहते हैं कि अज्ञानी जीव भी जड़कर्म का कर्त्ता नहीं है। वह अज्ञान को करता है; परन्तु जड़कर्म का कार्य उसका नहीं है। अज्ञानी का अज्ञान तो ऐसा जोरदार है कि कामकाज सब लड़के करें, परन्तु डोर अपने हाथ में रखता है। घर बैठकर भी सारा हिसाब माँगता है। यहाँ आचार्यदेव

कहते हैं कि भ्रम से भूला हुआ अज्ञानी अधिक से अधिक राग-द्वेष और संकल्प-विकल्प करता है; परन्तु वह परद्रव्य में कुछ भी फेरफार नहीं कर सकता। आँख की एक पलक झपकाने की भी उसमें ताकत नहीं है। (वह तो जड़ का कार्य है।)

देखो! कर्म का बंधन तो ऐसा है कि जीव जैसे मलिन परिणाम करता है, ऐसे ही कर्म बंधते हैं; तो भी उनका कर्त्ता अपने को मानता है वह मूढ़ है। तब बाहर में व्यापार-धंधा, मकान आदि कार्य तो जीव के भाव के अनुसार होते ही नहीं; तथापि जो उनका कर्त्ता अपने को मानता है, वह इसकी कितनी मूढ़ता है! जीव जड़ के कार्य किसप्रकार कर सकता है? मात्र अज्ञान करता है।

यह 17वाँ श्लोक (18 वाँ काव्य) सुनकर शिष्य को शंका होती है कि जीव मात्र भाव को ही करता है, कर्म को नहीं करता- ऐसा आप कहते हो- यह हमको कुछ समझ में नहीं आता। इस विषय में वह प्रश्न करता है-

इस विषय में शिष्य की शंका

पुग्गलकर्म करै नहि जीव,
कही तुम मैं समुझी नहि तैसी।
कौन करै यह रूप कहौ अब,
को करता करनी कहु कैसी॥
आपुही आपु मिलै बिछुरै जड़,
क्यौं करि मो मन संसय ऐसी?
सिष्य संदेह निवारन कारन,
बात कहैं गुरु है कछु जैसी॥19॥

अर्थः- पुद्गल कर्म को जीव नहीं करता है, ऐसा आपने कहा सो मेरी समझ में नहीं आता। कर्म का कर्त्ता कौन है और उसकी कैसी क्रिया है? ये अचेतन कर्म अपने आप जीव से कैसे बँधते-छूटते हैं? मुझे यह सन्देह है। शिष्य की इस शंका का निर्णय करने के लिये श्रीगुरु यथार्थ बात कहते हैं॥19॥

काव्य – 19 पर प्रवचन

जीव पुद्‌गल कर्म को नहीं करता –ऐसा आपने कहा, वह मेरी समझ में नहीं आता। कर्म का कर्त्ता कौन है और उसकी कैसी क्रिया है? यह अचेतन कर्म अपने आप जीव के साथ किस प्रकार बँधता है और छूटता है? मुझे यह शंका है। शिष्य की इस शंका का निवारण करने के लिए श्रीगुरु पुद्‌गल कर्म का स्वरूप जैसे है, वैसे समझाते हैं।

वर्तमान में बहुत लोगों को ऐसा ही प्रश्न उत्पन्न होता है कि आचार्य उमास्वामी ने 'मोक्षशास्त्र' के सूत्र में कहा है कि ज्ञान की आसातना के छह प्रकार के परिणामों से ज्ञानावरणी कर्म बँधता है। इसी प्रकार आठों ही कर्म कैसे–कैसे परिणामों से बँधते हैं –यह बताया है और आप कहते हो कि जीव कर्म को नहीं करता है तो हमें क्या समझना चाहिए? क्या ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, मोहनीय आदि जड़कर्म स्वयं अपने आप ही बँधते हैं और छूटते हैं? जीव विकार करता है, तभी तो कर्म बँधते हैं न? इतनी अपेक्षा तो कर्म के बँधने में आती है न?

भाई! सुन, कर्मरूप से बँधे –ऐसी योग्यतावाले रजकण जीव के समीप में पड़े ही हैं, वे अपनी योग्यता से ही बँधते और छूटते हैं। वे जीव के विकार से नहीं बँधते।

शिष्य के समाधान के लिए 20 वें पद में गुरु समझाते हैं–

ऊपर की हुई शंका का समाधान

पुद्‌गल परिनामी दरब, सदा परिनवै सोई।
यातैं पुदगल करमकौ, पुदगल करता होई॥20॥

अर्थः– पुद्‌गल द्रव्य परिणामी है, वह सदैव परिणमन किया करता है, इससे पुद्‌गल कर्म का पुद्‌गल ही कर्त्ता है ॥20॥

काव्य – 20 पर प्रवचन

पुद्‌गल परमाणुओं का स्वभाव कूटस्थ रहने का नहीं है। वे सदा

परिणमा करते हैं। जिसकी जो शक्ति होती है, उसको अन्य की अपेक्षा नहीं होती। पुद्गल स्वयं परिणमनस्वभावी होने से उसको जीव की अपेक्षा नहीं है, वह स्वयं परिणमता है। जिसमें जो शक्ति नहीं होती, उसे अन्य द्रव्य नहीं दे सकता। पुद्गल में कर्मरूप परिणमने की शक्ति न हो तो जीव की सामर्थ्य नहीं है कि उसको परिणमा सके? अतः जीव विकार करता है, इसलिए पुद्गल कर्मरूप परिणमते हैं –ऐसा नहीं है। पुद्गल कार्माणवर्गणा अपनी योग्यता से ही कर्मरूप परिणमती है।

अन्यमती ईश्वर को कर्त्ता माने और जैन कर्म को कर्त्ता माने –ये दोनों ही बातें मिथ्या हैं। सभी द्रव्य अपने-अपने परिणाम के ही कर्त्ता हैं –ऐसा ही वस्तु का स्वभाव है।

अज्ञानी कहता है कि जीव विकार करे तो कर्म बँधते हैं और धर्म करे तो कर्म छूट जाते हैं –ऐसा कहो तो यह बात हमको जँचती है; परन्तु कर्म स्वयं छूटते हैं– यह बात हमको नहीं जँचती। शास्त्र में व्यवहारनय के कथन आते हैं, जीव उनको पकड़ लेता है और उसके पीछे मूल निश्चय कहना है, उसको ग्रहण नहीं करता है। इस कारण विवाद उत्पन्न होता है तथा ऐसा कहता है कि समयसार में से यह बात निकाल दूँ कि व्यवहार की क्रिया से धर्म होता है और जीव पर का कार्य कर सकता है इत्यादि...। भाई! हम किसी के साथ चर्चा नहीं करते। तुम इतना बड़ा नाम धराते हो और चर्चा करने से इन्कार करते हो तो लोग आपके लिए क्या विचारेंगे? लोग चाहे जो विचारें हमको भानरहित विचारें तो भी वे स्वतंत्र हैं। इसमें हमको कुछ हानि नहीं है। 'चश्मा होवे तो ज्ञान होता है और चश्मा नहीं होवे तो ज्ञान नहीं होता' –ऐसी शल्य जिसको पड़ी है, उसको किस प्रकार समझाना? ज्ञान जाननहार (आत्मा) से होता है, ज्ञेय से अथवा निमित्त से नहीं होता। जाननेवाले के बिना जाने कौन? पाँच ज्ञान, तीन अज्ञान और चार दर्शन-ये उपयोग के बारह प्रकार हैं। इन बारह ही प्रकार के उपयोग का परिणमन जिस समय जैसा होने योग्य

होता है, वैसा अपने द्रव्य को अनुसरकर होता है, निमित्त को अनुसरकर नहीं होता।

कोई तर्क करता है कि चश्मा उतार दो तो ज्ञान होगा ? भाई ! ज्ञान न हो, वह भी ज्ञान की ऐसी योग्यता के कारण नहीं होता। चश्मा नहीं है, इसलिए ज्ञान नहीं हुआ –ऐसा नहीं है। आत्मा में परद्रव्य के कारण कुछ फेरफार होता ही नहीं। जानना होता है, वह भी अपने से होता है और अमुक जानना नहीं होता वह भी अपनी योग्यता से ही ऐसा होता है।

अज्ञानी का भ्रम भी ऐसा होता है कि उसको कोई समझा नहीं सकता। साधु नाम धराने पर भी दृष्टि विपरीत होती है।

यहाँ कहते हैं कि पुद्गल द्रव्य सदा परिणामी है। उसमें निरंतर-धारावाही परिणमन अनादि से चालू ही है। उसमें कर्म होने योग्य उसका परिणमन हो, तब वह स्वयं कर्मरूप परिणमता है, जीव उसको नहीं परिणमाता। पुद्गल कर्मरूप कैसे परिणमा ? कि उसका परिणमना स्वभाव है, इसलिए कर्मरूप परिणमा है। कर्म छूट क्यों गया ? कि उसका बदलने का स्वभाव है इसलिए कर्म अवस्था बदलकर अकर्मरूप हुई है। जीव ने धर्म किया इसलिए कर्म छूट गये ऐसा नहीं है।

(भाई !) वस्तु के ऐसे स्वभाव के भान बिना सामायिक और प्रोषध आदि करना भी सब 'रण में पीठ दिखाना' जैसा होता है।

ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, मोहनीय, अन्तराय, आयु, नाम, वेदनीय और गोत्र आदि रूप से कर्म अपने परिणमन स्वभाव से परिणमता है। जीव ने विकार किया, इसलिए पुद्गल को कर्मरूप परिणमना पड़ा –ऐसा नहीं है। जैसे तराजू के एक पलड़े में एक किलोग्राम का बाँट रखा तो सामने इतने ही वजनवाली वस्तु रखो तो तराजू का काँटा मध्य में आता है, तो क्या यह वस्तु काँटे को बीच में ले आई है या तराजू के कांटे का ऐसा स्वभाव है, इसलिए आया ? कांटा अपने परिणमन की योग्यता से ऐसा परिणमता है। अन्य किसी की सामर्थ्य नहीं है कि उसे परिणमा सके।

क्रमशः

स्वानुभूतिदर्शन : बहिनश्री की तत्त्वचर्चा

प्रश्न :—स्वानुभूति के काल में क्या आत्मा के प्रत्येक प्रदेश में आनन्द का वेदन होता है ?

समाधानः—हाँ, उस काल में भेद का लक्ष्य छूटकर आत्मा के प्रत्येक प्रदेश में आनन्द प्रगट होता है। वह आनन्द सिद्ध भगवान को पूर्ण प्रगट हुआ है, सम्यग्दृष्टि को अंशतः वेदन में होता है; तथापि जाति तो सिद्धभगवान जैसी ही है। वह आनन्दगुण आत्मा के असंख्य प्रदेशों में व्याप्त है। उसकी अनुभूति होने पर विकल्प छूट जाते हैं और जगत से न्यारा कोई अनुपम आनन्द प्रगट होता है। उसे जगत की कोई उपमा लागू नहीं पड़ती। उस आनन्द की इन्द्रपद, चक्रवर्तीपद अथवा अन्य किसी आनन्द के साथ तुलना नहीं होती। वे बाह्य आनन्द तो लौकिक रागयुक्त हैं जबकि यह वीतरागी आनन्द तो अलग ही है, उसकी किसी के साथ तुलना नहीं हो सकती। वह आनन्द वचनातीत है।

ज्ञायक की महिमा आये, उसमें सर्वस्वता लगे, उसकी रुचि-श्रद्धा हो तो जीव उस ओर ढलता है, उसके बिना नहीं ढल सकता। जिसने बाह्य में ही सर्वस्व मान लिया है अर्थात् अल्पक्रिया और शुभभाव करके उसमें सर्वस्व मान लेता है, उसे आत्मा की प्राप्ति (-सम्यग्दर्शन-स्वानुभूति) नहीं होती।

अशुभ से बचने के लिए बीच में शुभभाव आता है, उससे पुण्यबंध होता है; परन्तु आत्मा उन दोनों से न्यारा है, ऐसी श्रद्धा होनी चाहिए; और श्रद्धा हो तो उस ओर ढले।

अनन्त काल से उसने सब कुछ किया, परन्तु आत्मा का स्वरूप नहीं पहिचाना। उसने सर्वत्र भ्रमण किया, सब कुछ कंठाग्र किया, परन्तु आत्मा को नहीं पहिचाना। आत्मा को पहिचाने बिना भव का अभाव नहीं होता।

प्रश्न :— आत्मा स्वरूपानन्द में रम रहा था, आनन्द की तरंगों में डोल रहा था, उसमें आपको क्या कहना है? अतीन्द्रिय आनन्द में क्या संवेदन होता होगा?

समाधान:— उसका अर्थ क्या करना? वह कोई वाणी में आये वैसा थोड़े ही है? आत्मा तो अद्‌भुत है, उसके द्रव्य-गुण-पर्याय कोई निराले हैं। अनन्त काल से आकुलता थी वह मिटकर, आत्मा का निराकुलस्वभाव निर्विकल्पदशा में प्रगट होता है। आत्मा स्वयं आनन्दस्वभावी है अर्थात् आत्मा में आनन्दादि अनन्त गुण हैं और उनमें आत्मा परिणमन करता रहता है; अर्थात् आत्मा में अनेक प्रकार की क्रियाएँ उत्पन्न होती हैं। तरंगें उठती रहती हैं और उनमें वह केलि करता रहता है—ऐसा आत्मा का स्वभाव है। आत्मा में आनन्दादि अनन्त गुण हैं और उनकी पर्यायों की-परिणमन की तरंगें उठती रहती हैं, ऐसा उसका अर्थ है। वैसे तो वाणी में उसके लिये कोई उपमा नहीं है; सिद्ध भगवान को पूर्ण आनन्द है और इस स्वानुभूति में उसका अंश है, परन्तु जाति वही है। आत्मा स्वयं अस्तित्वरूप है, अवस्तु नहीं है; तथा वह अस्तित्व जागृतस्वरूप है। इसलिए जहाँ आकुलता से छूटा वहाँ आत्मा में जो स्वभाव है, वह प्रगट होता है; इसीलिए 'आनन्द-तरंग में केलि कर रहा था'—ऐसा कहा है। उस वाक्य में गंभीरता है।

कथन के लिए शब्दों द्वारा कहा जाता है कि केलि कर रहा था, रम रहा था, डोल रहा था; परन्तु उन सबके अर्थ में गंभीरता है। उसके स्वभाव में अद्‌भुतता है। शब्दों से ऐसा कहा जाता है कि तरंगों में डोलता था, झूलता था; मगर उसके भाव में गहनता है, वह कहीं दृष्टान्त से ख्याल में नहीं आती। सागर में झूलता था, तरंगों में डोलता था, ऐसे बाहरी दृष्टान्त आते हैं, किन्तु वस्तु कोई निराली है। वह तो जो स्वानुभूति में वेदन करे, उसके ख्याल में आती है, अर्थात् स्वानुभूति में जो स्वभाव है, उसका वेदन होता है।

स्वानुभूति की अद्‌भुतता में गंभीरता रही हुई है। उसके विषय में 'समयसार' में अमृतचन्द्राचार्य के कलशों में बहुत आता है। आत्मा ऐसा

अद्‌भुताद्‌-अद्‌भुतम है कि उसका शान्तरस लोकपर्यंत उछल रहा है, आत्मा डोलायमान हो रहा है—ऐसा समयसार के कलश में आता है।

तथा आत्मा में आनन्दगुण है, उसे विकल्प-राग की या बाह्य पदार्थ की अर्थात् स्वर्गलोक के या चक्रवर्ती के किन्हीं सुखों की अपेक्षा नहीं है। आत्मा स्वयं आनन्दस्वरूप ही है; इसलिए वह आनन्द भी निरपेक्ष-किसी की अपेक्षा रहित है। ज्ञायक आत्मा में ज्ञानादि अनन्त गुण हैं, परन्तु उनमें आनन्दगुण को मुख्य करके यह बात की गई है। विभावों से पृथक् और जगत से न्यारा—ऊपर तैरता—आत्मा अद्‌भुत आनन्द तरंग में डोलायमान हो रहा है, केलि कर रहा है, रम रहा है।—इन शब्दों में बड़ी गंभीरता रही हुई है। अनेक शब्दों द्वारा इस प्रकार का कथन अमृतचंद्राचार्य के कलशों में बहुत आता है।

निक्षेपों का समूह कहाँ चला जाता है, उसकी खबर नहीं रहती, नयों की लक्ष्मी उदय को प्राप्त नहीं होती और प्रमाण अस्त हो जाता है, तब आत्मा अन्दर से कोई निराला ही प्रगट होता है, चैतन्यस्वरूप लीला करता हुआ भीतर से प्रगट होता है।

कोई कहे कि हमें शान्ति हो गई, सो यह बात नहीं है; यह तो अलग बात है; यह आनन्द तरंगें कुछ और हैं। आनन्द अंतर में से स्वयं आता है। कुछ लोग विकल्पों को अति मंद करते हैं और फिर मात्र सूक्ष्म विकल्प रहने से उन्हें शान्ति लगती है; परंतु यहाँ तो विकल्पों से सर्व प्रकार से छूटकर जो आनन्द प्रगट होता है, वह अलग जाति का प्रगट होता है।

मुमुक्षु :— हमें तो विकल्प ही दिखायी देते हैं, तथा आप जिस आनन्द की बात करते हो, वह जाति ही कोई अलग लगती है।

बहिनश्री :— अनादि से विकल्प का अभ्यास हो रहा है इसलिए विकल्प ही दिखने में आते हैं। विकल्प मंद हों तो शांति लगती है और विकल्प विशेष हों तो आकुलता लगती है। परन्तु यहाँ तो अंतर में

शेष पृष्ठ 25 पर....

प्रथमानुयोग

....गतांक से आगे

तीर्थधाम चिदायतन

हस्तिनापुर का अतिशयकारी इतिहास

धार्मिक नगरी हस्तिनापुर का वर्णन उत्तरपुराण से

अथानन्तर जो अगाध और असार संसाररूपी सागर से पार कर देने में कारण हैं, अनेक राजा जिन्हें नमस्कार करते हैं और जो अत्यन्त श्रेष्ठ हैं, ऐसे अरनाथ तीर्थंकर की तुम सब लोग सेवा करो—उनकी शरण में जाओ। इस जम्बूद्वीप में सीता नदी के उत्तर तट पर एक कच्छ नाम का देश है। उसके क्षेमपुर नगर में धनपति नाम का राजा राज्य करता था। वह प्रजा का रक्षक था और लोगों को अत्यन्त प्यारा था। पृथिवीरूपी धेनु सदा द्रवीभूत होकर उसके मनोरथ पूर्ण किया करती थी। याचकों को संतुष्ट करनेवाले और शत्रुओं को नष्ट करनेवाले उस राजा में ये दो गुण स्वाभाविक थे कि वह याचकों के बिना भी त्याग करता रहता था और शत्रुओं के न रहने पर भी उद्यम किया करता था। उसके राज्य में राजा-प्रजा सब लोग अपनी-अपनी वृत्ति के अनुसार त्रिवर्ग का सेवन करते थे इसलिए धर्म का व्यतिक्रम कभी नहीं होता था। किसी एक दिन उस राजा ने अर्हन्नन्दन तीर्थंकर की दिव्यध्वनि से उत्पन्न हुए श्रेष्ठ धर्मरूपी रसायन का पान किया, जिससे राज्य सम्बन्धी भोगों से विरक्त होकर उसने अपना राज्य अपने पुत्र के लिए दे दिया और शीघ्र ही जन्म-मरण का अंत करनेवाली जैनी दीक्षा धारण कर ली। ग्यारह अंगरूपी महासागर के पारगामी होकर सोलह कारणभावनाओं के द्वारा तीर्थंकर नामक पुण्य कर्म का बन्ध किया। अन्त में प्रायोपगमन संन्यास के द्वारा उन्होंने जयन्त विमान में अहमिन्द्र पद प्राप्त किया। वहाँ तैंतीस सागर प्रमाण उनकी आयु थी, एक हाथ ऊँचा शरीर था, द्रव्य और भाव के भेद से दोनों प्रकार की शुक्ल लेश्याएँ थीं, वह साढ़े सोलह माह में एक बार श्वास लेता था, और तैंतीस हजार वर्ष में एक बार मानसिक अमृतमय आहार ग्रहण करता था। प्रवीचाररहित सुखरूपी सागर का पारगामी था, अपने अवधिज्ञान के द्वारा वह लोकनाड़ी के भीतर रहने वाले

पदार्थों के विस्तार को जानता था। उनके अवधिज्ञान का जितना क्षेत्र था, उतने ही क्षेत्र तक उसका प्रकाश, बल और विक्रियाऋद्धि थी। उनके राग-द्वेष आदि अत्यन्त शान्त हो गये थे और मोक्ष उसके निकट आ चुका था। वह साता वेदनीय के उदय से उत्पन्न हुए उत्तम भोगों का उपभोग करता था। इस तरह प्राप्त हुए भोगों का उपभोग करता हुआ आयु के अन्तिम भाग को प्राप्त हुआ—वहाँ से च्युत होने के सम्मुख हुआ।

अथानन्तर इसी जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में कुरुजांगल नाम का देश है। उसके हस्तिनापुर नगर में सोमवंश में उत्पन्न हुआ काश्यप गोत्रीय राजा सुदर्शन राज्य करता था। उसकी प्राणों से भी अधिक प्यारी मित्रसेना नाम की रानी थी। जब धनपति के जीव जयन्त विमान के अहमिन्द्र का स्वर्ग से अवतार लेने का समय आया, तब रानी मित्रसेना ने रत्नवृष्टि आदि देवकृत सत्कार पाकर बड़ी प्रसन्नता से फाल्गुन कृष्ण तृतीया के दिन रेवती नक्षत्र में रात्रि के पिछले प्रहर में सोलह स्वप्न देखे। सवेरा होते ही उन्होंने अपने अवधिज्ञानी पति से उन स्वप्नों का फल पूछा। तदनन्तर परम वैभव को धारण करनेवाली रानी पति के द्वारा कहे हुए स्वप्न का फल सुनकर ऐसी प्रसन्न हुई मानों उसे तीन लोक का राज्य मिल गया हो। उसी समय इन्द्रादि देवों ने जिनके गर्भकल्याणक का उत्सव किया है, जो अत्यन्त संतुष्ट है, मदरहित है, निरन्तर रमणीक है, सौम्य मुखवाली है, पवित्र है, उस समय के योग्य स्तुतियों के द्वारा देवियाँ जिसकी स्तुति किया करती हैं, और जो मेघमाला के समान जगत् का हित करनेवाला उत्तम गर्भ धारण करती है, ऐसी रानी मित्रसेना के मगसिर शुक्ल चतुर्दशी के दिन पुष्य नक्षत्र में तीनों ज्ञानों से सुशोभित उत्तम पुत्र उत्पन्न किया।

उनके जन्म के समय जो उत्सव हुआ था, उसका वर्णन करने के लिए इतना लिखना ही बहुत है कि उसमें शामिल होने के लिए अपनी-अपनी देवियों सहित समस्त उत्तम देव स्वर्ग खालीकर यहाँ आये थे। उस समय दीन, अनाथ तथा याचक लोग संतोष को प्राप्त हुए थे, यह कहना बहुत छोटी

बात थी क्योंकि उस समय तो तीनों लोक अत्यन्त संतोष को प्राप्त हुए थे। श्रीकुन्थुनाथ तीर्थंकर के तीर्थ के बाद जब एक हजार करोड़ वर्ष कम पल्य का चौथाई भाग बीत गया था, तब श्री अरनाथ भगवान का जन्म हुआ था। उनकी आयु भी इसी अन्तराल में शामिल थी। भगवान अरनाथ की उत्कृष्ट-श्रेष्ठतम आयु चौरासी हजार वर्ष की थी, तीस धनुष ऊँचा उनका शरीर था, सुवर्ण के समान उनकी उत्तम कान्ति थी, वे लावण्य की अंतिम सीमा थे, सौभाग्य की श्रेष्ठ खान थे, भगवान को देखकर शंका होती थी कि ये सौन्दर्य के सागर हैं या सौन्दर्य सम्पत्ति के घर हैं, गुण इनमें उत्पन्न हुए हैं या इनकी गुणों में उत्पत्ति हुई है अथवा ये स्वयं गुणमय हैं-गुणरूप ही हैं। इस प्रकार लोगों को शंका उत्पन्न करते हुए, बाल कल्पवृक्ष की उपमा धारण करनेवाले भगवान लक्ष्मी के साथ-साथ वृद्धि को प्राप्त हो रहे थे। इस प्रकार कुमार अवस्था के इक्कीस हजार वर्ष बीत जाने पर उन्हें मण्डलेश्वर के योग्य राज्य प्राप्त हुआ था और इसके बाद जब इतना ही काल और बीत गया तब पूर्ण चक्रवर्ती पद प्राप्त हुआ था। इस तरह भोग भोगते हुए जब आयु का तीसरा भाग बाकी रह गया तब किसी दिन उन्हें शरद्ऋतु के मेघों का अकस्मात् विलय हो जाना देखकर अपने जन्म को सार्थक करनेवाला आत्मज्ञान उत्पन्न हो गया। उसी समय लौकान्तिक देवों ने उनके विचारों का समर्थन कर उन्हें प्रबोधित किया और वे अरविन्दकुमार नामक पुत्र के लिए राज्य देकर देवों के द्वारा उठाई हुई वैजयन्ती नाम की पालकी पर सवार हो सहेतुक वन में चले गये। वहाँ तेला का नियम लेकर उन्होंने मगसिर शुक्ल दशमी के दिन रेवती नक्षत्र में संध्या के समय एक हजार राजाओं के साथ दीक्षा धारण कर ली ? दीक्षा धारण करते ही वे चार ज्ञान के धारी हो गये। इस प्रकार तपश्चरण करते हुए वे किसी समय पारणा के दिन चक्रपुर नगर में गये वहाँ सुवर्ण के समान कान्तिवाले राजा अपराजित ने उन्हें आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किए। इस तरह मुनिराज अरनाथ के जब छद्मस्थ अवस्था के सोलह वर्ष व्यतीत हो गये।

क्रमशः

करणानुयोग

भरतक्षेत्र के खण्ड

57. शरीर पाँच प्रकार के होते हैं :—

1. औदारिक शरीर – मनुष्यों, तिर्यंचों के शरीर

2. वैक्रियिक शरीर – देवों और नारकियों के शरीर

3. आहारक शरीर – आहारक ऋद्धिधारी भावलिंगी मुनियों के मस्तिष्क से तत्त्वों की शंका को दूर करने अथवा तीर्थ वंदना आदि के लिये निकले एक हाथ प्रमाण सप्त धातुरहित, श्वेत पुरुषाकार पुतले को आहारक शरीर कहते हैं।

4. तैजस शरीर – औदारिक, वैक्रियिक एवं आहारक शरीरों में कान्ति उत्पन्न करने में निमित्त।

5. कार्मण शरीर – ज्ञानावरणादि आठ कर्मों का समूह।

एक जीव को कम से कम दो और अधिक से अधिक चार शरीरों का संयोग हो सकता है।

पाँचों शरीरों में औदारिक शरीर सबसे स्थूल और कार्मण शरीर सबसे सूक्ष्म है।

58. शरीर की उत्कृष्ट स्थिति :—

औदारिक शरीर की – तीन पल्य।

वैक्रियिक शरीर की – तैतीस सागर।

कार्मण शरीर की – सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर।

ये सामान्य रूप से है। विशेषरूप से ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय और अन्तराय कर्म की उत्कृष्ट स्थिति तीस कोड़ाकोड़ी सागर है।

मोहनीय की सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर है।

नामकर्म व गोत्रकर्म की बीस कोड़ाकोड़ी सागर है।

आयुकर्म की तैंतीस सागर है।

59. निगोदिया :—

निगोद के दो भेद होते हैं – 1. नित्य निगोद, 2. इतर निगोद।

नित्य निगोद – जो जीव अनादिकाल से निगोद में ही हो अर्थात् जिसने आज तक निगोद से निकलकर दूसरी कोई पर्याय ही प्राप्त नहीं की, उसे नित्य निगोद कहते हैं।

इतर निगोद – जो जीव निगोद से निकलकर दूसरी कोई पर्याय प्राप्त करने के बाद पुनः निगोद में उत्पन्न हो, उसे इतर निगोद कहते हैं।

60. क्षुद्र भव :—

श्वास के अठारहवें भाग में जन्म–मरण करनेवाले लब्ध्यपर्याप्तक जीव क्षुद्र भव वाले हैं। ये एक अन्तर्मुहूर्त में 66336 बार जन्म–मरण कर लेते हैं। इसका विवरण इस प्रकार है—

क्षुद्र भव जीव		**भव संख्या**
पृथ्वीकायिक सूक्ष्म	–	6012
पृथ्वीकायिक बादर	–	6012
जलकायिक सूक्ष्म	–	6012
जलकायिक बादर	–	6012
अग्निकायिक सूक्ष्म	–	6012
अग्निकायिक बादर	–	6012
वायुकायिक सूक्ष्म	–	6012
वायुकायिक बादर	–	6012
प्रत्येक वनस्पति	–	6012
साधारण वनस्पति सूक्ष्म	–	6012
साधारण वनस्पति बादर	–	6012
दो इन्द्रिय	–	80
तीन इन्द्रिय	–	60

शेष पृष्ठ 27 पर....

पण्डित चेतनदासजी

उत्तर प्रदेश स्थित सहारनपुर जिले के रामपुर मनिहारन नगर को अपने जन्म से कृतार्थ करने वाले गोयल-गोत्रीय नर-रत्न पंडित चेतनदासजी, पंडित लालूमलजी के शिष्य थे। तत्त्वार्थसार ग्रंथ की प्रशस्ति में आपने अपना संक्षित परिचय दिया है; तद्नुसार आपका जन्म लगभग सन् 1871 में हुआ था। तेरह वर्ष की उम्र सन् 1884 से आपने वहाँ प्रचलित तेरापंथी-शैली में अध्ययन प्रारम्भ किया। अनेक-अनेक विद्वानों, धार्मिक जनों की संगति से आपका जीवन चार अनुयोगमय जिनवाणी में प्रतिपादित तत्त्वार्थों के चिन्तन, मनन में ही व्यतीत होने लगा। आपने पुराण, चरित्र-ग्रंथ, श्रावकाचार, यत्याचार, सिद्धांत, न्याय, दर्शन, अध्यात्म संबंधी अनेक-अनेक ग्रंथों का एकाग्रतापूर्वक स्वाध्याय किया। इन सभी का उल्लेख आपने स्वयं वचनिका के समापन में किया है।

सन् 1897, फाल्गुन कृष्ण पंचमी, दिन शुक्रवार को आपने पंचायती मंदिर रामपुर मनिहारन में इस वचनिका का लेखन-कार्य प्रारम्भ किया। जो सन् 1913 की चैत्र शुक्ल दशमी, दिन बुधवार को निर्विघ्न संपन्न हुआ। इस कृति से आपकी अध्ययन-शीलता, बहुशास्त्र-विज्ञता, बहुभाषा-विदता, निरभिमानता आदि का स्पष्ट परिचय प्राप्त होता है।

संस्कृत व प्राकृत भाषा के आप अच्छे जानकार थे। आपको तत्त्वार्थ-श्लोक-वार्तिक का हिंदी अनुवाद प्राप्त नहीं था। मूल संस्कृत से ही उसका अध्ययन कर आपने इस ग्रंथ में उसका भरपूर उपयोग किया है। श्रीमद् वंदनीय आचार्यों के समान आप अपने पूर्ववर्ती विद्वानों, साहित्यकारों का भी सम्मान करते हैं; इतना ही नहीं; वरन् उनकी बात अपनी ही बात समझकर कहीं-कहीं तो उनका नामोल्लेख किए बिना ही उनके साहित्य के अनेकों अंश भी यथावत् अपनी वचनिका में ले लेते हैं। आचार्यकल्प

पंडित टोडरमलजी, पंडित जयचंदजी छाबड़ा, पंडित सदासुखदासजी कृत वचनिकाओं के अनेकों अंश शब्दशः इस वचनिका में उपलब्ध हैं।

देव, शास्त्र, गुरु के प्रति समर्पित आपका व्यक्तित्व अध्यात्म-सम्पन्न रहा है—इसका बोध स्वयं उनकी ही लेखनी से लिखित उनके परिचय से ज्ञात हो जाता है। इस नर-भव के 42वें वर्ष में उन्होंने तत्त्वार्थसार वचनिका समाप्त की है। इसकी प्रशस्ति में अंग्रेजी-शासिका महारानी विक्टोरिया, शासक एडबर्ड, जार्ज पंचम के न्याय, नीति, सुख-समृद्धि-संपन्न शासन की उन्होंने प्रशंसा भी की है; जिससे आपकी निष्पक्ष वृत्ति-संपन्न सद्‌गुण-ग्राहकता की झलक भी पाठक को मिल जाती है।

...... **पृष्ठ 18 का शेष**

विकल्परहित होने की बात है। आत्मा स्वयं जागृतस्वरूप है, अस्तिस्वरूप है। उसका अस्तित्व कहीं चला नहीं गया है। विकल्प की अस्ति चली गई है; तथापि अपना अस्तित्व मौजूद रहता है और वह अस्तित्व चैतन्यरूप है; वह चैतन्य आनंदगुण से परिपूर्ण है। उसका आनंदगुण कोई निराला ही है, अद्‌भुत है; और ज्ञानगुण भी कोई अनोखा है। ऐसे तो उसमें अनंत गुण हैं। समस्त विकल्प छूट जाएँ तो फिर रहेगा कौन ? एक आत्मा रहता है; उसमें आनंदगुण प्रगट होता है, आनंदगुण की अनुभूति होती है। विकल्पों के अभ्यास में विकल्प ही दिखते हैं, दूसरा कुछ दिखाई नहीं देता; इसलिए उसे ऐसा लगता है कि विकल्प टूट जाने पर फिर रहेगा क्या ? आनंदगुण से भरपूर आत्मा रहता है। वह चैतन्य अनंतगुण में केलि करता है, रमता है, डोलता है। कोई कहता है कि हमें शान्ति... शान्ति... लगती है; परंतु वह अमुक विकल्प मंद होते हैं, उसकी शांति है। जबकि यह शांति तो कोई अलग ही है, वह प्रगट होने पर उसे भीतर से तृप्ति होती है कि इसके सिवा कोई मार्ग नहीं है; यही मुक्ति का मार्ग है।

क्रमशः

श्रुत परम्परा एवं श्रुतज्ञान का स्वरूप

अनुयोगों के व्याख्यान की पद्धति

प्रथमानुयोग—

प्रथमानुयोग में तो अलंकार शास्त्र की व काव्यादि शास्त्रों की पद्धति मुख्य है, क्योंकि अलंकारादि से मन रंजायमान होता है, सीधी बात कहने से ऐसा उपयोग नहीं लगता जैसे अलंकारादि युक्ति सहित कथन से उपयोग लगता है तथा परोक्ष बात को कुछ अधिकतापूर्वक निरूपण किया जाए तो उसका स्वरूप भलीभाँति भासित होता है।

मोक्षमार्गप्रकाशक, आठवाँ अधिकार, पृष्ठ 286

करणानुयोग—

करणानुयोग में गणित आदि शास्त्रों की पद्धति मुख्य है, क्योंकि वहाँ द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भाव की प्रामाणिकता का निरूपण करते हैं, सो गणित की आम्नाय से उसका सुगम जानपना होता है।

चरणानुयोग—

चरणानुयोग में सुभाषित नीति शास्त्रों की पद्धति मुख्य हैं, क्योंकि वहाँ आचरण कराना है, इसलिए लोक प्रवृत्ति के अनुसार नीति मार्ग बतलाने पर वह आचरण करता है।

द्रव्यानुयोग—

द्रव्यानुयोग में न्याय शास्त्रों की पद्धति मुख्य हैं, क्योंकि वहाँ निर्णय करने का प्रयोजन है और न्याय शास्त्रों में निर्णय करने का मार्ग दिखाया है।

मोक्षमार्गप्रकाशक, आठवाँ अधिकार, पृष्ठ 287

इस प्रकार इन चारों अनुयोगों में वह मुख्य पद्धति है।

अनुयोगों का अभ्यास क्रम

अब अनुयोगों का अभ्यास क्रम का वर्णन करते हैं। पं० टोडरमलजी ने

मोक्षमार्गप्रकाशक में लिखा है—

वहाँ प्रथमानुयोगादि का अभ्यास करना। पहले इसका अभ्यास करना, फिर इसका करना ऐसा नियम नहीं है, परन्तु अपने परिणामों की अवस्था देखकर जिसके अभ्यास से अपनी धर्म में प्रवृत्ति हो उसी का अभ्यास करना। अथवा कभी किसी शास्त्र का अभ्यास करें, कभी किसी शास्त्र का अभ्यास करें। तथा जैसे रोजनामचे में तो अनेक रकमें जहाँ-तहाँ लिखी है, उनकी खाते में ठीक खतौनी करें तो लेन-देन का निश्चय हो, उसी प्रकार शास्त्रों में तो अनेक प्रकार का उपदेश जहाँ-तहाँ दिया है, उसे सम्यग्ज्ञान में यथार्थ प्रयोजन सहित पहिचाने तो हित-अहित का निश्चय हो।

मोक्षमार्गप्रकाशक, आठवाँ अधिकार, पृष्ठ 304

इसलिए जिस अनुयोग से तुम्हारा हित सधे, उस अनुयोग का स्वाध्याय जीव को आवश्यक है।

पुनः पंडित टोडरमलजी कहते हैं—

जिनमत में यह परिपाटी है कि पहले सम्यक्त्व होता है फिर व्रत होते हैं, वह सम्यक्त्व स्व-पर का श्रद्धान होने पर होता है और वह श्रद्धान द्रव्यानुयोग का अभ्यास करने पर होता है, इसलिए प्रथम द्रव्यानुयोग के अनुसार श्रद्धान करके सम्यग्दृष्टि हो, पश्चात् चरणानुयोग के अनुसार व्रतादिक धारण करके व्रती हो। इस प्रकार मुख्यरूप से तो निचली दशा में ही द्रव्यानुयोग कार्यकार है। **मोक्षमार्गप्रकाशक, आठवाँ अधिकार, पृष्ठ 293**

इस प्रकार अनुयोगों का अभ्यास क्रम है। **क्रमशः**

...... पृष्ठ 23 का शेष

चार इन्द्रिय	-	40
असैनी पंचेन्द्रिय	-	8
सैनी पंचेन्द्रिय	-	8
मनुष्य	-	8

कुल लब्ध्यपर्याप्तक 66336 क्षुद्र भव। **क्रमशः**

<u>बालवाटिका</u>

सम्राट हिमशीतल

कांची के पल्लववंशी सम्राट हिमशीतल बौद्ध धर्मी थे। इनकी रानी मदनसुन्दरी जैनधर्मी थी, जो जिनेन्द्र भगवान का रथोत्सव निकालना चाहती थी, किन्तु राजा के गुरु बौद्ध धर्मी थे। उनका कहना था कि कोई भी जैन विद्वान जब तक मुझे शास्त्रार्थ द्वारा विजित नहीं कर लेता, तब तक जैन रथ नहीं निकल सकता। गुरु के विरुद्ध राजा भी कुछ न कह सके।

जैनाचार्य श्री अकलंकदेव को पता चला तो व राजा हिमशीतल के दरबार में गये और बौद्ध गुरु से शास्त्रार्थ के लिए कहा। बौद्ध गुरु ने तारा नाम की देवी को सिद्ध कर रखा था। इसलिए उन्हें अपने जीतने का पूर्ण विश्वास था। उन्होंने श्री अकलंक देव से कहा कि यदि तुम हार गये तो कोल्हू में पिलवा दिये जाओगे। अकलंकदेव ने कहा कि यदि तुम हार गये तो ? बौद्ध गुरु बोले कि हम देश निकाला ले लेंगे। शास्त्रार्थ आरंभ हो गया। अकलंकदेव महाविद्वान और स्याद्वादी थे। निरन्तर छह माह तक वाद–विवाद होने पर भी विजय प्राप्त न हुई तो अकलंकदेव को ज्ञात हुआ कि बौद्ध गुरु ने कोई देवी सिद्ध कर रखी है और वही पर्दे में उनकी तरफ से उत्तर देती है। देवी एक बात को एक बार ही कहती थी।

अकलंकदेव ने कहा कि मैं नहीं समझा, दूसरी बार कहो तो देवी चुप थी। बौद्ध गुरु से जवाब बन न पड़ा और अकलंकदेव को विजय प्राप्त हुई। जिससे बौद्ध गुरु को देश छोड़कर लंका आदि की तरफ जाना पड़ा। जैनधर्म की अधिक प्रभावना हुई। राजा हिमशीतल ने जैनधर्म को ग्रहण कर लिया और जनता भी बहुत बड़ी संख्या में जैनधर्मी हो गयी। चीनी यात्री ने यहाँ जैनियों तथा इनके मंदिरों और जैन साधुओं के रहने की गुफाओं के अधिक संख्या में बताया है और यह लिखा है कि पल्लव राज्य में जैनधर्म की खूब प्रभावना थी।

शिक्षा– जिससे जीवों का हित हो, ऐसे जिनधर्म रूपी सच्चे धर्म की ही प्रभावना करने योग्य है।

"जिस प्रकार–उसी प्रकार" में छिपा रहस्य

जिस प्रकार– दीपक प्रकाशमय है और प्रकाश का कारण है। दीपक प्रकाश को साथ लेकर आता है। दीपक के बिना प्रकाश अकेला कदापि संभव नहीं है।

उसी प्रकार– आत्मा ज्ञानमय है और ज्ञान का कारण है। आत्मा ज्ञान को सदैव साथ रखता है। ज्ञान आत्मा बिना अकेला कभी नहीं रहता है। ऐसी स्थिति होते ही मिथ्यात्वभाव, तत्सम्बन्धी आकुलता स्वयमेव रुक जाते है।

जिस प्रकार– स्नान कर स्वच्छ वस्त्र पहन कर जिन पूजा करते देख अन्य अपवित्र वस्त्रादि वाले लोग स्वयं दूर ही रहते है।

उसी प्रकार– भेद विज्ञान रूप साबुन तथा समता रूपी जल से निर्मल हुई परिणति से कषाय स्वयं दूर रहती है।

जिस प्रकार– लोक में भी रोज के झगड़े, कलह विवादादि से बचने के लिए वहां उनसे न्यारे हो जाते है।

उसी प्रकार– रोज–रोज के दुःखों को दूर करने के लिए आचार्य भेदविज्ञान की प्रेरणा देते है। वर्णादि और रागादि से न्यारे निजभाव से सन्मुख होना तथा वही स्थिर रहना ही सुखी होने के उपाय है।

जिस प्रकार– मकड़ी अपनी लार में बंधी है वह छूटना चाहे तो छूट सकती है।

उसी प्रकार– जीव विभाव के जाल में बंधा है, फंसा है, परन्तु प्रयत्न करे तो स्वयं मुक्त हो सकता है, पर्याय में बंध है, पर्याय में ही मुक्त होगा, द्रव्य में तो बंध नहीं है।

जिस प्रकार– अपने महल में सुख से रहने वाले चक्रवर्ती राजा को बाहर निकलना सुहाता ही नहीं।

उसी प्रकार– जो चैतन्य महल में विराज गये हैं, उन्हें बाहर आना कठिन लगता है, भाररूप लगता है, आंख से रेत उठाने जैसा दुष्कर लगता है। जो स्वरूप में ही आसक्त हुआ उसे बाहर की आसक्ति टूट गई है।

जिस प्रकार– कोई चोर पकड़े जाने का आरोप चाँदनी पर लगाने मात्र से दण्ड मुक्त नहीं हो सकता। कोई विद्यार्थी बहाने से उत्तीर्ण नहीं हो सकता।

उसी प्रकार– कोई कर्मोदय और नोकर्म का बहाना बनाने या उन्हें दोष से दुःख से मुक्त नहीं हो सकता।

जिस प्रकार– कोई कहे रास्ते में पत्थर पड़ा था इसलिए ठोकर लगी, उसे चोट लगना बंद नहीं हो सकता क्योंकि रास्ते में अनेक पत्थर, कांटें आदि आयेंगे।

उसी प्रकार– जो दुःख का कारण परद्रव्यों–कर्मादिक को मानता है वह कभी सुखी नहीं हो सकता।

क्रमशः   **संकलन – स्व० प्रो० पुरुषोत्तमकुमार जैन, रुड़की**

<u>समाचार-दर्शन</u>

पूज्य गुरुदेवश्री के 135 वें उपकार दिवस पर
सांस्कृतिक कार्यक्रम सम्पन्न

तीर्थधाम मङ्गलायतन : यहाँ संचालित भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन के छात्रों द्वारा पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी का उपकार दिवस 9 मई 2024 को उत्साहपूर्वक मनाया गया। प्रातः पूजन के पश्चात् पूज्य गुरुदेवश्री का मांगलिक सी.डी. प्रवचन, तत्पश्चात् डॉ. सचिन्द्र शास्त्री द्वारा गुरुदेव के उपकार बताते हुए नाटक समयसार पर स्वाध्याय का लाभ प्राप्त हुआ।

सायंकालीन कार्यक्रम में जिनेन्द्रभक्ति के पश्चात् **'मिलिये पूज्य गुरुदेवश्री से'** कार्यक्रम जिसकी अध्यक्षता श्री जैनबहादुर जैन, कानपुर ने की। मुख्य अतिथि के रूप में पण्डित अशोक लुहाड़िया, डॉ. सचिन्द्र शास्त्री आदि ने अपने वक्तव्य प्रस्तुत किये। मंगलार्थी साधक, शुभ, संयम, आगम, पारस जैन, विराट चौहान ने पूज्य गुरुदेवश्री के उपकारों का वर्णन अपने वक्तव्य में किया। इसका संचालन मंगलार्थी प्रशांत जैन व अपूर्व जैन ने तथा मंगलाचरण मंगलार्थी अविरुद्ध जैन, सनावद ने किया।

अक्षय तृतीया पर्व सानन्द सम्पन्न

तीर्थधाम मङ्गलायतन : यहाँ संचालित भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन के छात्रों द्वारा 10 मई 2024 वैशाख सुदी तृतीया के अवसर पर अक्षय तृतीया पर्व उत्साह के साथ भगवान आदिनाथ जिनेन्द्र पूजन, प्रक्षाल, पूज्य गुरुदेवश्री का सी.डी. प्रवचन, तत्पश्चात् अक्षय तृतीया पर्व पर पण्डित सचिन्द्र जैन द्वारा स्वाध्याय, दोपहर में धवला वाचना बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन द्वारा, सायंकालीन जिनेन्द्र भक्ति, तत्पश्चात् अक्षय तृतीया पर विशेष व्याख्यान बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन द्वारा किया गया।

श्री सिद्धचक्र विधान सानंद सम्पन्न

गढ़ाकोटा : श्री महावीर कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन मुमुक्षु मंडल ट्रस्ट द्वारा संचालित श्री पंचबालयति जिनालय में तीर्थधाम मङ्गलायतन के निर्देशन में दिनांक 12 मई से 17 मई तक श्री 1008 सिद्धचक्र विधान का आयोजन किया गया।

जिसमें पंडित गुलाबचन्द जैन बीना, पंडित धनसिंह ज्ञायक पिड़ावा, पंडित राजेन्द्र जैन जबलपुर, पंडित रमेशजी मंगल सोनगढ़, पंडित निर्मल जैन सागर, पंडित सौरभ शास्त्री सागर, पंडित अंकित शास्त्री व तीर्थधाम मङ्गलायतन से डॉ. सचिन्द्र

शास्त्री, पंडित अभिषेक शास्त्री व मङ्गलार्थी अभिषेक जैन का अभूतपूर्व सहयोग प्राप्त हुआ। सम्पूर्ण विधान का संयोजन श्री चक्रेशकुमार जैन ऊमरा परिवार ने किया।

जिसमें सागर, पथरिया, रहली, दमोह, जबेरा के मुमुक्षु भाई–बहिनों ने भी लाभ लिया। इसी बीच आगामी पंचकल्याणक तीर्थधाम चिदायतन का मंगल आमंत्रण भी उपस्थित विद्वानों की उपस्थिति में दिया गया।

स्वर्ण जयंती वर्ष पर निबन्ध प्रतियोगिता

मुंबई : श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन तीर्थ सुरक्षा ट्रस्ट मुम्बई के सफलतम 50 वर्ष होने के मंगल अवसर पर संपूर्ण देश में अनेकों आयोजन किए जा रहे हैं, इसी शृंखला में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित **निबंध लेखन प्रतियोगिता जिसके विषय–1. आत्मानुभूति में स्वाध्याय का महत्त्व, 2. जैन तीर्थ क्षेत्रों के जीर्णोद्धार में हमारी भूमिका।**

इसकी जमा कराने की अन्तिम तिथि भगवान महावीरस्वामी निर्वाण महोत्सव 01 नवम्बर 2024।

नियमावली :— यह निबंध प्रतियोगिता दो वर्गों में आयोजित है— **1) 12 से 35 वर्ष तक 2) 36 वर्ष से ऊपर के लिए... शब्द सीमा :- 500 - 700 शब्द**

सम्पर्क सूत्र - पं. रितेश शास्त्री बांसवाड़ा - 9413118517; पं. विराग शास्त्री, जबलपुर - 9300642434; शास्त्री दीपक जैन 'ध्रुव' - 9079891238

रजिस्ट्रेशन हेतु गूगल फार्म लिंक –

https://forms.gle/rQBpHYS8FwDQaT2bA

तीर्थधाम चिदायतन आवास रजिस्ट्रेशन

आपको यह जानकर हर्ष होगा कि ऐतिहासिक अतिशयकारी पौराणिक तीर्थक्षेत्र हस्तिनापुर की पुण्यधरा पर श्री शान्तिनाथ–अकम्पन–कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, हस्तिनापुर द्वारा **तीर्थधाम चिदायतन में रविवार, 1 दिसम्बर से शुक्रवार 6 दिसम्बर 2024** तक आयोजित होने वाले **श्री 1008 शान्तिनाथ दिगम्बर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महा–महोत्सव** में पधारने वाले साधर्मियों की आवास व्यवस्था हेतु **आवास रजिस्ट्रेशन पोर्टल** का शुभारम्भ किया जा रहा है।

इस पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महा–महोत्सव में पधारने वाले सभी साधर्मियों (जिन्हें आवास की आवश्यकता है अथवा जिन्हें आवास की आवश्यकता नहीं है) से विनम्र अनुरोध है कि आप इस आवास रजिस्ट्रेशन पोर्टल को अवश्य भरें, जिससे आपके रहने की उचित व्यवस्था की जा सके।

हमें आशा है कि आप इस व्यवस्था में पूर्ण सहयोग करेंगे एवं इस पोर्टल पर अपने साथ–साथ अन्य साधर्मीजनों को भी पंजीकृत कर धर्मलाभ हेतु अपनी सहभागिता सुनिश्चित करेंगे।

Awas Registration Link - Awas.chidayatan.com

सम्पर्क सूत्र - श्री अजय जैन - 8279972747

षट्खण्डागम ग्रन्थ की वाचना अनवरत प्रवाहित

पन्द्रहवीं पुस्तक की वाचना 29 अप्रैल 2024 से प्रारम्भ

विद्वत् समागम – आदरणीय बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन, जयपुर

दोपहर 01.30 से 03.15 तक (प्रतिदिन)	**षट्खण्डागम (धवलाजी)**
रात्रि 07.30 से 08.30 बजे तक	भगवती आराधना ग्रन्थ का स्वाध्याय
08.30 से 09.15 बजे तक	**समयसार ग्रन्थाधिराज के कलशों का व्याकरण के नियमानुसार शुद्ध उच्चारण सहित सामान्यार्थ**

नोट—इस कार्यक्रम में आप ZOOM ID-9121984198,

● Password - tm@4321 youtube channel - teerthdhammangalayatan

के माध्यम से भी शामिल हो सकते हैं।

● ● ●

जुलाई 2024 माह के मुख्य जैन तिथि-पर्व

1 जुलाई – आषाढ़ कृष्ण 10
श्री नमिनाथ जन्म-तप कल्याणक

4 जुलाई – आषाढ़ कृष्ण 14
चतुर्दशी

12 जुलाई – आषाढ़ शुक्ल 6
श्री महावीर गर्भ कल्याणक

13 जुलाई – आषाढ़ शुक्ल 7
श्री नेमिनाथ मोक्ष कल्याणक

14 जुलाई – आषाढ़ शुक्ल 8
अष्टमी
अष्टाह्निका व्रत प्रारंभ

20 जुलाई – आषाढ़ शुक्ल 14
चतुर्दशी

21 जुलाई – आषाढ़ शुक्ल 15
गुरु पूर्णिमा
अष्टाह्निका व्रत समाप्त

22 जुलाई – श्रावण कृष्ण 1
नववर्ष प्रारंभ
वीरशासन जयंती

23 जुलाई – श्रावण कृष्ण 2
श्री मुनिसुव्रत गर्भ कल्याणक

28 जुलाई – श्रावण कृष्ण 8
अष्टमी

30 जुलाई – श्रावण कृष्ण 10
श्री कुंथुनाथ गर्भ कल्याणक

मंगल अवसर

तीर्थधाम चिदायतन पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव

हस्तिनापुर में, तीर्थधाम चिदायतन का निर्माण कार्य तेजी से चल रहा है, तीर्थधाम मंगलायतन के निर्देशन में ही तीर्थधाम चिदायतन का पंचकल्याणक - 01 दिसम्बर से 06 दिसम्बर 2024 तक होना निश्चित हुआ है।

जगत में पंचकल्याणक सम्यग्दर्शन का सर्वोत्कृष्ट निमित्त कार्य है आप यहाँ के अभिन्न अंग हैं यह कहने की आवश्यकता नहीं कि आप सपरिवार पधारे... आप सभी लोग तो पधार ही रहे हैं, साथ में और भी अपने मित्रों, परिजनों, साधर्मी जनों को भी लेकर आना है। ऐसी हमारी विनती है।

आप हमसे निम्नरूप से जुड़ सकते हैं —

पंचकल्याणक में जो भी पात्र बाकी है उनको भरा जाना है....

पद	संख्या
भगवान आदिनाथ की 71 इंच उन्नत श्वेत मार्बल की कायोत्सर्गवंत प्रतिमा	
भगवान महावीर की 71 इंच उन्नत श्वेत मार्बल की कायोत्सर्गवंत प्रतिमा	
ईशान इन्द्र-इन्द्राणी	
सानत इन्द्र-इन्द्राणी	
माहेन्द्र इन्द्र-इन्द्राणी	
8 नंबर से 12 नंबर पद इन्द्र	
13 नंबर से 16 नंबर पद इन्द्र	
लौकान्तिक देव	
माता-पिता	
महामंत्री	
यज्ञनायक	
1 से 8 वें नम्बर के राजा	
9 से 12 वें नम्बर राजा	
राजसभा के छड़ीदार	2
भूमिगोचर राजा	4

विद्याधर राजा	4
अष्टदेवी (6)	16
56 कुमारी	
चौबीसी जिनालय शिखर	
चौबीसी जिनालय शिखर कलश	
चौबीसी जिनालय वेदी	
मुख्य शिखर ध्वजा	
मुख्य तोरण द्वार	
सिंह द्वार	
मुख्य प्रवेश द्वार	
मुख्य निकास द्वार	
जिनवाणी विराजमानकर्ता	
श्री कुन्दकुन्दाचार्य फोटो	
श्री अकम्पनाचार्य फोटो	
पण्डित टोडरमलजी फोटो	
पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी फोटो	
रैम्पमार्ग प्रदर्शनी	
शान्तिनाथ जीवनगाथा	

यह अवसर चूकने जैसा नहीं है सभी किसी न किसी रूप में जुड़े, आपके जो भी भाव हो कृपया सूचित करें।

आशा ही नहीं, अपितु पूर्ण विश्वास है कि आप हमारे आग्रह को अवश्य स्वीकार करके इस **पामर से परमात्मा** बनने के महान कार्य में अपनी सहभागिता अवश्य प्रदान करेंगे।

किसी का कोई सुझाव हो तो हमें अवश्य बतलाएँ।

धन्यवाद

सम्पर्क :-

पण्डित सुधीर शास्त्री, 9756633800 ; डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, 7581060200

तीर्थधाम मङ्गलायतन का सुयश

तीर्थधाम मङ्गलायतन द्वारा संचालित भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन के मङ्गलार्थी छात्रों का (डीपीएस, सीबीएसई बोर्ड) कक्षा 10 का लौकिक परीक्षा परिणाम शत-प्रतिशत रहा है। ध्यान रहे सभी मङ्गलार्थी तीर्थधाम मङ्गलायतन में रहकर प्रात: 05.00 बजे से धार्मिक कक्षाओं, पूजन, सीडी स्वाध्याय आदि सभी गतिविधियों में सम्पूर्ण उपस्थिति के साथ शामिल रहते हैं। मङ्गलायतन परिवार सभी के उज्ज्वल भविष्य की कामना करता है।

कक्षा 10वीं के होनहार मङ्गलार्थी

मङ्गलार्थी प्रशम जैन
(95 %)

मङ्गलार्थी सोहम जैन
(93 %)

मङ्गलार्थी पर्व जैन
(90 %)

मङ्गलार्थी श्रेयस जैन
(89 %)

मङ्गलार्थी सम्यक् जैन
(87 %)

मङ्गलार्थी तेजस जैन
(86 %)

मङ्गलार्थी ध्रुव जैन
(85 %)

मङ्गलार्थी आर्जव जैन
(80 %)

मङ्गलार्थी हर्षित जैन
(77 %)

मङ्गलार्थी ऋषि जैन
(75 %)

मङ्गलार्थी लक्ष्य जैन
(72 %)

मङ्गलार्थी विराट चौहान
(71 %)

मङ्गलार्थी सारांश जैन (64 %)

मङ्गलार्थी आयुष गुप्ता (56 %)

Regn. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2024-26

मुनिराज परीषहों को कैसे जीतते हैं ?

मुनिराज बाईस परीषहों को सहन करते हैं। जो हठ से परीषह को सहन करते हैं, उन्हें धर्म तो नहीं है, पर शुभभाव भी नहीं है; उनके तो केवल अशुभभाव होता है। जिन्हें आत्मा के भानपूर्वक शुद्धापयोग हुआ है, उन्हें परीषह के काल में उस ओर का विकल्प भी नहीं उठता – यही परीषहजय कहलाती है।

(– परमागमसार, ८२३)

पं. सं. : DELBIL/2001/4685

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक स्वप्निल जैन द्वारा **मङ्गलायतन** मुद्रणालय, आगरा रोड, अलीगढ़-202001 छपवाकर, 'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़-202001 से प्रकाशित। **सम्पादक :** डॉ. जयन्तीलाल जैन,मङ्गलायतन वि०वि०

If undelivered please return to -

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, हरिनगर, आगरारोड, अलीगढ़-202001 (उ.प्र.)

Shri Adinath-Kundkund-Kahan Digamber Jain Trust
Harinagar, Agra Road, Aligarh-202001 (U.P.)

Ph. : 9997996346, 2410010/10; Fax : 2410019/22
info@mangalayatan.com www.mangalayatan.com